242hi05

5

हिन्दुस्तानी संगीत की स्वरलिपि पद्धति

भारतीय संगीत मनोधर्म पर आधारित है। अपनी कला से ही संगीतज्ञों ने विभिन्न रागों व तालों में भावनात्मक अभिव्यक्ति के लिए काव्य या पद रचनाओं को आबद्ध करके उन्हें **ख्याल, ध्रुपद, ठुमरी** आदि गेय विधाओं के रूप में प्रस्तुत किया है। इस प्रकार के प्रस्तुतिकरण संगीतकारों के साथ ही लुप्त न हो जाएँ इसीलिए उन्हें लिखित स्वरूप दे कर संरक्षित करने के प्रयास में समय-समय पर भिन्न-भिन्न चिन्हों से युक्त स्वरलिपियाँ प्रकाश में आईं। स्वरलिपियों के माध्यम से ही पूर्व संगीतज्ञों द्वारा रचित बंदिशों का संग्रह आज उपलब्ध हो सका है। अत: स्वरलिपि का विस्तृत ज्ञान प्राप्त करना अत्यन्त आवश्यक है।

उद्देश्य

इस पाठ को पढ़ने के पश्चात आप–

- स्वरलिपि की आवश्यकता का वर्णन कर सकेंगे;
- वैदिक काल से लेकर मध्यकाल तक स्वरलिपि के विकास का उल्लेख कर सकेंगे;
- आधुनिक काल में स्वरलिपि के महत्त्व को प्रतिपादित कर सकेंगे;
- वर्तमान समय में प्रचलित विष्णु नारायण भातखंडे स्वरलिपि पद्धति का सामान्य ज्ञान प्राप्त कर सकेंगे।

5.1 स्वरलिपि – अर्थ एवं अवधारणा

किसी भी भाषा को लेखन द्वारा अभिव्यक्त करना 'लिपि' कहलाता है। जिस प्रकार किसी भाषा की 'लिपि' के रूप में हिन्दी, उर्दू, तमिल आदि के लिए अलग-अलग

रेखाओं, बिन्दुओं तथा विभिन्न प्रकार के चिह्नों का प्रयोग किया जाता है उसी प्रकार संगीत में भी गायन वादन हेतु प्रयुक्त किए जाने वाले शुद्ध, कोमल, तीव्र स्वरों, मन्द्र-मध्य व तार सप्तकों तथा तीनताल, झपताल, एकताल आदि अनेकानेक तालों को लिखित रूप में दर्शाने के लिए जिन चिन्हों व रेखाओं या अंकों आदि का प्रयोग किया जाता है उसे ही सामान्य रूप से 'स्वरलिपि' कहा जाता है। स्वरलिपि में केवल स्वर ही नहीं वरन अक्षर, ताल आदि के साथ-साथ **कण, मींड़, गमक** आदि संगीत के तत्वों से सम्बन्धी चिन्हों का भी समन्वय होता है।

पाठगत प्रश्न 5.1

1. **स्वरलिपि** किसे कहते हैं?

2. **स्वरलिपि** में चिन्हों के माध्यम से क्या दर्शाया जा सकता है?

5.2 स्वरलिपि की ऐतिहासिक पृष्ठभूमि

भारत में गुरू-शिष्य परम्परा के रूप में संगीत की शिक्षण प्रक्रिया सदा मौखिक ही रही है। संगीत की इस शिक्षण प्रक्रिया में स्वर व लय के असंख्य सूक्ष्म प्रयोगों को पूर्णत: मौखिक रूप से गा-बजा कर ही सिखाया जा सकता है। यदि इन प्रयोगों को लिखने की चेष्ठा की जाए तो यह कदापि सम्भव नहीं है किन्तु फिर भी स्वरों का ऊँचा-नीचापन, मन्द्र या तार सप्तक के स्वरों का प्रयोग दर्शाने के लिए वैदिक काल से ही विद्वानों द्वारा प्रयत्न किए जाते रहे हैं जिनका उल्लेख प्राचीन ग्रन्थों में उपलब्ध होता है।

वैदिक काल में **'उदात्त', 'अनुदात्त'** व **'स्वरित'** तीन स्वरों का उल्लेख मिलता है। उदात्त अर्थात ऊँचा, अनुदात्त अर्थात नीचा और 'स्वरित अर्थात मध्य का जिसमें स्वर के उच्चत्व व नीचत्व का समाहार या समन्वय हो जाता है। यह भी कह सकते हैं कि स्वरित मध्य का स्वर है। इन स्वरों को लिखित रूप में दर्शाने के लिए 'उदात्त' हेतु खड़ी रेखा (1) 'अनुदात्त' हेतु पड़ी रेखा (–) तथा 'स्वरित' के लिए किसी चिन्ह का प्रयोग नहीं किया गया है। आगे चल कर वैदिक काल में ही स्वरों को दर्शाने के लिए रेखाओं के स्थान पर 1, 2, 3 अंकों का प्रयोग किया जाने लगा। यह प्रयोग वैदिककालीन भिन्न-भिन्न संहिताओं या ग्रन्थों में किन्हीं विशिष्ट नियमों के अन्तर्गत भिन्न-भिन्न रूप से दिखाई देता है। **उदात्त** के लिए 1, **स्वरित** के लिए 2, तथा **अनुदात्त** के लिए 3 अंक का प्रयोग किया गया। धीरे-धीरे स्वरों की संख्या तीन से बढ़ कर सात हो गई और तब गान ग्रन्थों में स्वरांकन के लिए 1, 2, 3, 4, 5, 6, 7 संख्याओं का प्रयोग किया जाने लगा।

इस प्रकार यह ज्ञात होता है कि वैदिक काल में भी अध्ययन-अध्यापन की दृष्टि से स्वरों को लिखित रूप में अंकित करने का प्रयास किया जाता था। इसे ही आने वाले समय में स्वरलिपि पद्धति के लिए किए गए प्रयोगों का प्रारम्भिक स्रोत माना जा सकता है। धीरे-धीरे स्वरलिपि के लिए प्रयुक्त रेखाओं व अंकों के स्थान पर **षड्ज, ऋषभ, गन्धार** आदि शब्दों या फिर **सा रे ग म** आदि अक्षरों का प्रयोग किया जाने लगा उदाहरणस्वरूप **भरत मुनि** ने अपने ग्रन्थ '**नाट्यशास्त्र**' में स्वरों को दर्शाने के लिए षड्ज, ऋषभ आदि संज्ञाओं का प्रयोग किया है जबकि **मतंग** ने अपने ग्रन्थ '**बृहद्देशी**' में **सा रे ग म प ध नी** आदि संकेतों को स्वर के रूप में प्रयुक्त किया है। इन्होंने प्रयोग विधि के अनुरूप स्वर का अंकन दो रूपों में किया है:- (1) ह्रस्व (2) दीर्घ

ह्रस्व - स रि ग म प धनि
दीर्घ - सा रे गा मा पा धा नी

काल की इकाई को 'कला' कहा गया और उसके भी दो रूप लघु व गुरू माने गए। लघु कला को ह्रस्व द्वारा व गुरू कला को दीर्घाक्षर द्वारा अंकित किया गया।

तेरहवीं शताब्दी में शार्ङ्गदेव कृत 'संगीत रत्नाकर' में 'स्वरगताध्याय' में सप्त स्वरों का अंकन मतंग के ही समान है किन्तु मन्द्र व तार सप्तक के स्वरों को दर्शाने के लिए क्रमश: स्वर के ऊपर बिन्दु (गं) व स्वर के ऊपर खड़ी रेखा (ग) का प्रयोग किया गया। जाति प्रस्तारों में स्वरों के नीचे शब्दों के अक्षर भी दिए गए हैं।

पाठगत प्रश्न 5.2

1. **मतंग मुनि** व **भरत मुनि** की स्वरांकन पद्धति में क्या अन्तर था?
2. **पं. शार्ङ्गदेव** ने स्वर सप्तक दर्शाने के लिए किन-किन चिन्हों का प्रयोग किया?

5.3 वर्तमान में प्रचलित पं. वि. ना. भातखंडे स्वरलिपि पद्धति

पं. विष्णु नारायण भातखंडे द्वारा रचित स्वरलिपि पद्धति आधुनिक समय में सर्वाधिक प्रचलित है। सरल और सुविधाजनक होने के कारण अधिकाँशत: प्रकाशित पुस्तकों में तथा शिक्षण संस्थानों में इसी स्वरलिपि पद्धति का प्रयोग किया जा रहा है।

पं. वि. ना. भारतखंडे ने एक स्वरलिपि पद्धति की रचना की और इसका प्रयोग उन्होंने 'हिन्दुस्तानी संगीत पद्धति क्रमिक पुस्तक मालिका' (6 भागों में) के नाम से प्रकाशित पुस्तकों में किया। प्रकाशन की दृष्टि से अत्यधिक सुविधाजनक सिद्ध हुई।

इस स्वरलिपि पद्धति के चिन्ह इस प्रकार हैं:-

शुद्ध स्वर - कोई चिन्ह नहीं, केवल सा रे ग...

कोमल स्वर - स्वर के नीचे रेखा (ग॒)

तीव्र स्वर - मध्यम के ऊपर खड़ी रेखा (मे)

मन्द्र सप्तक - स्वर के नीचे बिन्दु म़ प़ ध़ नी़

मध्य सप्तक - कोई चिन्ह नहीं, केवल सारेग...

तार सप्तक - स्वर के ऊपर बिन्दु सां रें गं मं

जिस स्वर के आगे जितने - ऐसे चिन्ह हों, उसे उतनी ही मात्राओं तक गाना चाहिए।

◡ इस चिन्ह के भीतर अंकित स्वरों को एक ही मात्रा में गाना चाहिए।

मींड दर्शाने के लिए इस चिन्ह का प्रयोग किया जाता है - ⌒ प रे

ताल मात्राओं के लिए निम्नलिखित चिन्हों का प्रयोग किया जाता है

सम - x

खाली - 0

ताली - 2, 3, 4 आदि ताली की गिनती लिखी जाती है

यदि कोई स्वर कोष्ठक में लिखा गया हो जैसे (प) इसका अर्थ है कि पहले उसके आगे का स्वर फिर वह स्वर, उससे पूर्व का स्वर तथा फिर वही स्वर गाना है अर्थात् उदाहरण में ध प म प इस प्रकार चार स्वर एक ही मात्रा में गाने हैं।

पाठगत प्रश्न 5.3

1. स्वरों के ऊपर बिन्दु क्या दर्शाने के लिए लगाया जाता है?
2. मींड के लिए किस चिन्ह का प्रयोग किया जाता है?
3. कोष्टक में लिखे गए स्वर का क्या अर्थ है?

आपने क्या सीखा

ख्याल, ध्रुपद, धमार व ठुमरी आदि गेय विधाओं की बन्दिशों या पदरचनाओं को स्वर

व ताल बद्ध रूप में लिखित स्वरूप प्रदान करके संग्रहित करने के लिए स्वरलिपि की रचना की गई। वैदिक से लेकर आधुनिक काल तक अनेकानेक रेखाओं, बिन्दुओं तथा विभिन्न चिन्हों का प्रयोग करते हुए समय-समय पर भिन्न-भिन्न स्वरलिपि पद्धतियाँ विकसित हुई। कभी खड़ी रेखा या पड़ी रेखा का प्रयोग किया गया तो कभी 1,2,3 अंकों का या फिर स्वरों को ह्रस्व या दीर्घ रूप में लिखा गया। परन्तु आधुनिक काल में पं. विष्णु नारायण भातखण्डे द्वारा रचित स्वरलिपि सर्वाधिक प्रचलित है क्योंकि यह बहुत सरल व स्पष्ट है।

पाठांत प्रश्न

1. स्वरलिपि किसे कहते हैं?
2. स्वरलिपि का उद्देश्य क्या है?
3. भारतीय संगीत के इतिहास में स्वरलिपि की निरन्तरता न होने का क्या कारण है?
4. वैदिक काल में स्वर के प्रारम्भिक स्वरूप क्या थे?
5. वेदों में स्वरों के उच्चत्व व नीचत्व के क्या चिन्ह थे?
6. मतंग ने स्वरों के उच्चत्व व नीचत्व के लिए किन संकेतों का प्रयोग किया है?
7. ग्रन्थों में काल की इकाई को क्या नाम दिया गया है?
8. पं. वि. ना. भातखंडे ने ताल के लिए किन चिन्हों का प्रयोग किया है?

पाठगत प्रश्नों के उत्तर

5.1

1. गायन-वादन में प्रयुक्त किए जाने वाले स्वर, सप्तक व ताल को लिखित रूप में दर्शाने के लिए जिन चिन्हों, रेखाओं व अंकों का प्रयोग किया जाता है उसे स्वरलिपि कहते हैं।
2. स्वरलिपि में शुद्ध, कोमल, तीव्र स्वर, मन्द्र व तार सप्तक के स्वर तथा तालों को विभिन्न चिन्हों द्वारा दर्शाया जा सकता है।

5.2

1. भरत मुनि ने स्वरों के लिए षड्ज, ऋषभ आदि संज्ञाओं का प्रयोग किया है जबकि मतंग मुनि ने स रे ग म प ध नि आदि संकेतों को स्वर के रूप में प्रयोग

टिप्पणी

किया है और प्रयोगविधि के अनुरूप स्वर का अंकन ह्रस्व व दीर्घ रूपों में किया है।

ह्रस्व – स रि ग म प ध नि

दीर्घ – सा रे गा मा पा धा नी

2. पं. शांर्ङ्गदेव ने मन्द्र व तार सप्तक को दर्शाने के लिए क्रमशः स्वर के ऊपर बिन्दु (गं) व खड़ी रेखा (ग) का प्रयोग किया है।

5.3

1. स्वरों के ऊपर बिन्दु तार सप्तक के स्वर दर्शाने के लिए लगाया जाता है।
2. मींड के लिए इस चिन्ह का प्रयोग किया जाता है जैसे साध
3. कोष्टक में लिखे गए स्वर का अर्थ है पहले उस स्वर के आगे का स्वर फिर वही स्वर तत्पश्चात उससे पूर्व का स्वर और फिर से वही स्वर, इस प्रकार एक मात्रा में ही चार स्वर गाए जाते हैं उदाहरणार्थ (प) से तात्पर्य है कि 'ध प म प' यह चार स्वर गाए अथवा बजाए जाएँगे।

पारिभाषिक शब्दावली

1. मनोधर्म – कल्पना पर आधारित।
2. लिपि – विशिष्ट चिन्हों से युक्त लिखने का तरीका।
3. ख्याल – विलम्बित तथा द्रुत लयों में एकताल, तीनताल व झपताल आदि में आलाप, बोलतान व तान सहित गाई जाने वाली गेय विधा।
4. ध्रुपद – चारताल अथवा चौताल आदि में उपज तथा लयकारी करते हुए गाई जाने वाली गेय विधा।
5. ठुमरी – दीपचन्दी व कहरवा आदि तालों में बोल बनाव करते हुए गाई जाने वाली गेय विधा।
6. संहिता – ऋचा या मन्त्र संग्रह।
7. प्रबन्ध – तेरहवीं शताब्दी से पूर्व धातु व अंगों से युक्त गेय विद्या।
8. जाति प्रस्तार – जाति गायन में प्रयुक्त स्वर विस्तार।